GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

भारतीय शिक्षा प्रणाली

डॉ. दिप्ती एन. त्रिवेदी,
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
श्रीमती बी.सी. जे. कॉलेज ओफ एज्युकेशन (एम.एड्.)
खंभात
मो. 9898491347 E-mail:- drdiptri@gmail.com

सारांश

भारतीय शिक्षा प्रणाली प्राचीन गुरुकुल परंपरा से आधुनिक डिजिटल शिक्षा तक विकसित हुई है। यह प्रणाली विभिन्न सभ्यताओं, दार्शनिक विचारों और वैज्ञानिक दृष्टिकोणों का एक अद्वितीय समावेश है। भारतीय शिक्षा में पारंपरिक ज्ञान, नैतिक मूल्यों, और आधुनिक तकनीकी नवाचारों का संयोजन इसे अन्य वैश्विक प्रणालियों से अलग बनाता है। यह लेख भारतीय शिक्षा प्रणाली की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वर्तमान चुनौतियाँ, और भविष्य की संभावनाओं का विश्लेषण करता है।

Keywords: भारतीय शिक्षा प्रणाली, गुरुकुल परंपरा, आधुनिक शिक्षा, नवाचार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति

श्रीमद्भगवद्गीता ने मन पर बड़ा सूक्ष्म विचार करते हुए स्पष्टतया स्वीकार किया है कि मानव, मन के कारण बंधन में पड़ता है अथवा दूसरी ओर मुक्ति का दर्शन करता है। मानव, मन वाला प्राणी है। उसके अन्तःकरण में मन के साथ चित्त, बुद्धि और आत्मा भी है। मन दसों इन्द्रियों का निग्रह करते-करते स्वयमेव एकादश इन्द्रिय के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीमद्भगवदपुराण में रूपक बाँधते हुए दसों इन्द्रियों को मुँहजोर घोड़े की संज्ञा दी गई है। मन सारथी के रूप में उनकी बागडोर सम्हाले हुए है। उन इन्द्रियों को वश में करने के लिए मन को अपनी सारी ताकत झोंकनी पड़ गई है। अतः उसे भी दुर्निवार अश्व की ही भाँति निरूपित किया है। जब श्रीकृष्ण अर्जुन को इस मन को अपने वश में करने के लिए निर्देश देते हैं तब अर्जुन प्रश्न करता है कि यह मन तो बड़ा दुराग्रही है, उसे वश में कैसे किया जाय ? उत्तर में श्रीकृष्ण जो श्लोकमंत्र बोल गए हैं. उसमें गूढ़ चमत्कारिक अर्थ भरा हुआ है। वह श्लोक है-

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

दुर्निग्रह चंचल मन को अभ्यास और वैराग्य के द्वारा वश में किया जा सकता है। स्वामी आत्मानन्द ने मनो-सामाजिक अवस्था के सम्बन्ध में कहा था- प्रारम्भ में बच्चा पूर्णतया स्वार्थमय हुआ करता है। वह केवल अपनी सुविधाओं को देखा करता है। यदि माँ बीमार है, तो भी वह अपनी भूख को शान्त करने के लिए माँ को ही विवश करता है। यदि माँ कहती है कि वह बीमार है तो भी बच्चा पलंग पर सिर पटकने लगता है। मजबूरन माँ को ही उसकी व्यवस्था करनी पड़ती है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है, वह दूसरों की तकलीफों के साथ अपने को जोड़ता चलता है। स्कूल से लौटने पर अपनी माँ को बिस्तर पर पड़ा देखकर वह व्याकुल हो जाता है और माँ के हाथ-पैर दबाने लगता है। अपनी सुविधा को भूल डॉक्टर को बुलाने दौड़ा चला जाता है। खाने की व्यवस्था स्वयं करने के लिए तैयार हो जाता है। इससे यही सिद्ध होता है कि मनो-सामाजिकता, प्रौड़ता एवं समझदारी आने की निशानी है तथा स्वार्थबुद्धि नासमझ बुद्धि की निशानी है।

पाश्चात्य शिक्षा मनोविज्ञान व्यक्ति को एक 'कमोडिटी' मानकर उसकी उपयोगिता पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है, जबकि शिक्षा मनोविज्ञान के द्वारा व्यक्तित्व के विकास की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। वह शिश्शाचों को अभी भी कम उम्र का स्वार्थी बालक मानकर उसे ऊपर वर्णित छोटा बच्चा ही समझता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है, उसमें सामाजिकता का विकास होता जाता है। अतः शिक्षा मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य बालक को सामाजिक बनाना होना चाहिए। प्राचीन गुरुकुलों में शिष्य को इसी प्रकार की शिक्षा मिला करती थी। वह कम उम्र में ही उपनयन के पश्चात् गुरु को सौंप दिया जाता था। अन्य शिष्यों के साथ वह सामूहिकता में जीने के स्वभाव को प्राप्त कर उसी प्रकार बढ़ता जाता था। उसमें सामाजिकता की वृद्धि अपने-आप होती चलती थी। वह अपने साथी के दुख-सुख में सदैव साथ रहकर कर्तव्य का निर्वाह करना सीखता जाता था। एक महत्व की बात यही है कि शिक्षा समूह में अधिक सफल हुआ करती है। गुरुकुलों में स्वाध्याय एवं गुरु से प्राप्त शिक्षा को आपस में बाँटकर शिष्य उसे दुहराते हुए पूर्णता की ओर बढ़ते चलते हैं। आज भी घर से दूर छात्रावासों में रहने वाले छात्र गृहवासी छात्रों से अधिक मेधावी होते हैं।

आज का समाज स्वार्थप्रेरित होता चला जा रहा है। हड़ताल, बहिष्कार, धरना आदि रोजमर्रा की बातें हो गयी हैं। गृहनिवासी बालक उसी के साथ जीता और पलता-बढ़ता है। उसके संस्कार उसी के साथ बनते और बढ़ते चले जाते हैं। अतः यह आवश्यक हो गया है कि जब तक समाज भ्रष्ट बना हुआ है तब तक बच्चा समाज से दूर रहे।

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

रोजगारोन्मुख शिक्षा भी एक छलावा है। रोजगार की शिक्षा विद्यालयों में नहीं दी जा सकती। रोजगार तो कार्य करते-करते अनुभव से ही सीखा जा सकता है। एक वाणिज्य संकाय के छात्र को यदि दुकान सौंप दी जाय तो उस दुकान का भट्ठा बैठना सुनिश्चित है। विद्यालयों में रोजगार के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है, जबकि रोजगार पूर्णतया व्यावहारिक हुआ करता है। व्यवहार ही मनुष्य को रोजगारी बनाता है। हमारे जितने राजनैतिक नेता हैं, उनमें से कदाचित् किसी ने ही विद्यालय या महाविद्यालय में राजनीति विषय की शिक्षा पाई हो।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलनों में असहयोग का बड़ा हाथ रहा है। जिसके सामने अंग्रेजों को हथियार डालते आज की पीढ़ी ने देखा है। असहयोग को एक सुलभ, सस्ता और निरापद हथियार समझा जा रहा है। छोटी से छोटी बात को लेकर बन्द की आवाज बुलन्द की जाती है और कुछ ही घंटों में ही पूरा शहर वीरान नजर आता है। बंद करने की इस प्रक्रिया में बालकों का भरपूर उपयोग किया जाता है। बन्द का सबसे व्यापक असर पहले स्कूल और कालेजों पर ही पड़ता है। बालकों के लिए यह सबसे अधिक घातक सिद्ध हुआ है। छोटे-छोटे स्वार्थों की सम्पूर्ति के लिए पूरे शहर को बन्द होते देख बालक का अप्रौढ़ मस्तिष्क स्वयं भी उसी प्रकार का व्यवहार करने की बात सीखने लगता है। वह इतना उद्दण्ड होता जाता है कि स्कूल के शिक्षक और उसके माता-पिता भी उससे कुछ कहने में कतराने लगते हैं। इससे बालक अनुशासनहीनता की ओर बढ़ता चला जाता है।

उपुर्यक्त संदर्भ में हम भारतीय शिक्षा प्रणाली में बड़े उपयोगी तत्वों का समावेश पाते हैं। सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण बात यही है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली शिक्षार्थी को कमोडिटी न मानकर एक शुद्ध, बुद्ध और अपने आप में स्वतंत्र इकाई के रूप में पाती है। वह उसे उँगली पकड़कर सिखाने के स्थान पर चाहती है कि वह स्वयं देखे-सुने और अपने रूप में ढाल कर स्वीकार करें। इस प्रणाली में गुरु भले ही शिक्षा के केन्द्र में हो, पर शिष्य उससे प्राप्त ज्ञान को अपना रूप देने के लिए स्वतन्त्र हुआ करता है। शिष्य की स्वतन्त्र वृत्ति कहीं पर भी बोझिल या गतिहीन नहीं होती। सबसे बड़ी बात यह है कि इसमें प्राणवत्ता कायम रहती है।

भारतीय शिक्षा ज्ञान की असंख्य धाराओं के सामंजस्यपूर्ण एकीकरण के साथ शिक्षा की एक समग्र प्रणाली है। इस देश का नाम 'भारत' रखने से इसके विलक्षण ज्ञानोदय का पता चलता है। 'भारत' का अर्थ है 'भ+रत'। यहाँ 'भ ज्ञान' (कांति तेज) और 'रत' = तल्लीन (तल्लीन, तल्लीन) का अर्थ है। इस प्रकार 'भारत' का अर्थ हुआ एक ऐसा देश जो सदैव ज्ञान की विभिन्न गतिविधियों में लीन रहता है। इस प्रकार प्रबुद्ध और मेधावी

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

भारत की अपनी अनूठी और अलग-थलग प्राचीन शिक्षा प्रणाली है जो दुनिया के अन्य देशों से काफी अलग है। जिसे 'भारतीय शिक्षा' के नाम से जाना जाता है।

भारतीय शिक्षा में अध्ययन के साथ अनुभव, अभिव्यक्ति के साथ भावना, प्रकृति के साथ संस्कृति, बुद्धि के साथ तर्क और सीखने के साथ गणित का सामंजस्यपूर्ण संयोजन है। इसके अलावा भारतीय संस्कृति की ब्रह्मचर्य आश्रम व्यवस्था की नींव में शिक्षा है। इस दौरान प्राप्त ज्ञान से भारतीय लोगों में संपूर्ण जीवन को जानने, आनंद लेने और सराहने की तीव्र इच्छा होती है। इस प्रकार आजीवन ज्ञान अर्जन और आजीवन ज्ञान का प्रसार भारतीय शिक्षा प्रणाली की रीढ़ बनी हुई है।

भारतीय शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत ऋषियों के आश्रमों में, गुरुकुलों में तथा विद्यापीठों में शिक्षा की व्यवस्था थी। प्राचीन भारत में शिक्षा की शुरुआत उपनयन (जानुई) संस्कार से होती थी। विद्यार्थी अपने परिवार को छोड़कर प्रकृति के समीप स्थित गुरुकुल में अध्ययन करने जाता था। इस गुरुकुल का सम्पूर्ण प्रबंधन तपस्वी ऋषियों द्वारा किया जाता था। भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु अपने शिष्यों को वेद, उपनिषद, पुराण, इतिहास, व्याकरण, नीतिशास्त्र, तर्कशास्त्र, व्युत्पत्ति, कानून, भूगोल, भूविज्ञान, खगोल विज्ञान, अलंकारशास्त्र, वाक्चातुर्य, युद्धकला, भाषा विज्ञान आदि विषयों पर व्यापक ज्ञान प्रदान करते थे। इसके अतिरिक्त गुरुकुल में मूर्तिकला, वास्तुकला, चित्रकला, संगीत, साहित्य आदि भारतीय कलाओं का ज्ञान भी दिया जाता था। भारतीय शिक्षा परंपरा केवल पुस्तकों से ही ज्ञान प्रदान नहीं करती थी। बल्कि मानव जीवन को उन्नत करने वाले विभिन्न नैतिक मूल्यों एवं आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान भी प्रदान किया गया। इस प्रकार, भारतीय शिक्षा प्रणाली में आध्यात्मिक और भौतिक दोनों ज्ञान प्रदान किया जाता था। विद्यार्थी गुरुकुल में रहकर सभी प्रकार की गतिविधियों के माध्यम से जीवन की उचित समझ प्राप्त करता था और अपनी शिक्षा समाप्त होने पर गुरु को दक्षिणा देता था। भारतीय शिक्षा केवल रटने पर आधारित नहीं है, बल्कि वास्तव में यह ज्ञान, समझ, अनुप्रयोग और विश्लेषणात्मक कौशल विकसित करने की एक प्रक्रिया है। जो भारतीय शिक्षा की प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता है। भारतीय शिक्षा की प्रकृति को विस्तृत रूप से समझने के लिए तक्षशिला, नालंदा, काशी, विक्रमशिला, वल्लभी आदि विश्वविद्यालयों की शिक्षा प्रणालियों का उदाहरण लिया जा सकता है।

इस प्रकार भारतीय शिक्षा के स्वरूप के संदर्भ में भारतीय संस्कृति हमें भारतीयता का दर्शन कराती है।

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

भारतीय शिक्षा प्रणाली अनूठी है. भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली अपनी शिक्षण विधियों में भी अद्वितीय है, जिसमें संवाद, प्रश्नोत्तरी और कथन शामिल हैं। प्राचीन शिक्षा प्रणाली-संवाद पद्धति के अनुसार गुरु-शिष्य के बीच जिज्ञासु संवाद के माध्यम से ज्ञान का आदान-प्रदान होता था। प्रश्नोत्तरी विधि में शिष्य जिज्ञासा और विनम्रता से प्रश्न पूछता है और गुरु संतोषजनक उत्तर देता है और कथन विधि में गुरु प्रकृति के सान्निध्य में व्याख्यान के माध्यम से शिष्यों को जीवन के हर क्षेत्र का ज्ञान देता है और शिष्य उसे सुनकर सीखते हैं। इसके अलावा दिन-प्रतिदिन की विभिन्न गतिविधियों और व्यवहारों के माध्यम से भी शिक्षा दी जाती थी। भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु प्रेमपूर्वक कुम्हार की तरह शिष्य का स्वरूप बनाते हैं। परिणामस्वरूप, इस रचनात्मक कार्य में पुनरावृत्ति या परिवर्तन गुरु के लिए श्रम नहीं बल्कि स्वयं की साधना बन जाता है। इस प्रकार भारतीय शिक्षा में शिक्षण की प्रक्रिया एक प्रेमपूर्ण गतिविधि बनी हुई है। इस प्रकार भारतीय शिक्षा की विभिन्न पद्धतियों एवं गतिविधियों में भारतीय दृष्टिकोण देखने को मिलता है।

भारतीय संस्कृति में शिक्षा का दृष्टिकोण आध्यात्मिक होते हुए भी समाजोन्मुख रहा है। अत: भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों में अलौकिक एवं सांसारिक का सुन्दर समन्वय है। भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली पर विचार करते हुए भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में बात करें तो, भारतीय शिक्षा प्रणाली में 'सा विद्या या विमुक्तये' यानी 'मुक्ति देने वाला सच्चा ज्ञान' का बहुत महत्व है। अत: भारतीय शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी को जीवन के सभी प्रकार के लौकिक एवं अलौकिक बंधनों से मुक्त कराकर मानव जीवन के वास्तविक अर्थ तक ले जाना है। भारतीय शिक्षा प्रणाली के तहत, गुरु का एक नेक उद्देश्य होता है कि वह अपने शिष्य को 'अपनी किताबें खोलने' के लिए नहीं बल्कि 'अपना दिमाग खोलने' के लिए कहकर स्वयं के प्रति जागरूक करें। मानव चेतना का सर्वांगीण विकास ही भारतीय शिक्षा का मूल उद्देश्य है। भारतीय शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य न केवल मनुष्य को शिक्षित करना है बल्कि मानव जीवन को बढ़ाने वाले नैतिक मूल्यों को विकसित करना भी है। भारतीय शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को परमात्मा के सत्-चित्-आनन्द स्वरूप अर्थात् सत्-चित्-आनन्द स्वरूप का ज्ञान कराकर निर्भय बनाना है। भारतीय शिक्षा का एक उद्देश्य विद्यार्थियों को देवत्व के प्रति जागरूक करना है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि भौतिक क्षेत्र में प्रगति किये बिना भारतीय शिक्षा में आध्यात्मिक और भौतिक दोनों गुणों की शिक्षा दी जाती है।उपनिषदों में ज्ञान के स्वरूपों का वर्णन करते हुए दो प्रकार के ज्ञान का उल्लेख किया गया है - पराविद्या और अपराविद्या। तदनुसार, भारतीय शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य पराविद्या

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

(ब्रह्मविद्या) और अपराविद्या (लोकिकाविद्या) का ज्ञान एक साथ प्रदान करना है। इस प्रकार भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों में भी भारतीय संस्कृति और भारतीय परम्परा की गहरी प्रतिध्वनि है।

भारतीय शिक्षा में गुरु का स्थान आदरणीय है। भारतीय संस्कृति के अनुसार, गुरु वह व्यक्ति होता है जो शिष्य को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। इस प्रकार, भारतीय संस्कृति में गुरु का बहुत महत्व है क्योंकि वह अपने शिष्य को अज्ञानता के अंधकार से ज्ञान के पवित्र प्रकाश की ओर ले जाता है। भारतीय संस्कृति में गुरु को त्रिदेव अर्थात ब्रह्मा, विष्णु और महेश के समकक्ष तथा अनंत ज्ञान का जीवंत स्वरूप माना जाता है। भारतीय संस्कृति में, एकलव्य जैसे शिष्यों की कहानियां, जिन्होंने अपना सम्पूर्ण राज्य और उससे भी अधिक अपना अंगूठा अपने गुरु को दक्षिणा में दे दिया था, भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु के महत्वपूर्ण स्थान की ओर संकेत करती हैं। भारतीय संस्कृति में गुरुभावना को एक पवित्र अनुष्ठान माना जाता है।

भारतीय शिक्षा में गुरु और शिष्य का रिश्ता अद्वितीय है। इस प्रकार का विशेष संबंध भारतीयता की पहचान बना हुआ है, जैसा कि दुनिया के अन्य देशों में नहीं देखा जाता है। प्राचीन भारत में गुरु, शिष्य के लिए ब्रह्म का अवतार होता था, क्योंकि गुरु और शिष्य के बीच भावनात्मक संबंध होता था। भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु और शिष्य के बीच का रिश्ता इतना भावनात्मक होता था कि जब शिष्य अपनी पढ़ाई पूरी कर अपने घर के लिए विदा लेता था तो शिष्य को विदा करते समय गुरु और शिष्य दोनों की आंखों में आंसू आ जाते थे। इससे गुरु और शिष्य के बीच भावुक और मधुर संबंध का पता चलता है। भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु और शिष्य के बीच संबंध अध्ययन की अवधि तक ही सीमित नहीं था, बल्कि आजीवन था। भारतीय शिक्षा के अंतर्गत गुरु और शिष्य के बीच के अविभाज्य संबंध को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा में शिष्य गुरु के प्रति समर्पित होता है और गुरु शिष्य के प्रति समर्पित होता है।घर के लिए प्रस्थान करते समय शिष्य को विदाई देते समय गुरु और शिष्य दोनों की आँखों में आँसू आ जाते थे। यह गुरु और शिष्य के बीच एक भावुक और मधुर रिश्ते का सुझाव देता है। भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु-शिष्य का रिश्ता केवल अध्ययन अवधि तक ही सीमित नहीं रहता था बल्कि आजीवन रहता था। भारतीय शिक्षा के अंतर्गत गुरु और शिष्य के बीच अपरिहार्य संबंध को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा में शिष्य गुरुपरायण है और गुरु शिष्यपरायण है।

शिष्य गुरु को सर्वज्ञानमय मानकर उसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर से अधिक परब्रह्म ही मानता है और उसे वैसा ही समादर देता है-

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ।।

गुरु ने ज्ञानशलाका लेकर शिष्य के नेत्रों को उन्मीलित कर दिया है, छात्र की विवेक-बुद्धि को जागृत कर दिया है जिससे उसे उचित अनुचित की अनुभूति हो गई है। अब वह ज्ञान के मार्ग का अन्वेषण करता चला जाता है। एक बात और, भारतीय शिक्षा मनोविज्ञान ज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य के सम्बन्ध में बड़ा स्पष्ट है। वह जानता है- "सा विद्या या विमुक्तये"। विद्या या ज्ञान वही है जो हमें छुटकारा दिलाये। हम अपने जीवन में जिन बन्धनों में जकड़े हुए पाते हैं, उनसे हमारी शिक्षा या ज्ञान हमें मुक्त करता है। बंधन अनेक प्रकार के हैं जिनसे सम्पूर्ण जीवन जकड़ा हुआ है। ज्ञान हमें उनसे छुटकारा दिलाता है। हमारी नितान्त आवश्यकताएँ ही हमारी जकड़न हैं- बंधन हैं। उनसे विमुक्ति जरूरी है। उसी में हमारी समस्त भौतिक एवं जीवन सम्बन्धी आवश्यकताएँ भी हैं। शिक्षा के भिन्न-भिन्न रूपों में प्राप्त हमारा ज्ञान इन सबसे छुटकारा देने का संबल हमें देता है। हमारा मन-मस्तिष्क और हृदय इतना सबल और प्रबुद्ध हो जाता है कि जीवन का जो क्षेत्र हमें प्राप्त होता है उसमें निपुणता से आगे बढ़ चलते हैं। अपने जीवन की सारी सांसारिक आवश्यकताओं की परिपूर्ति का ढंग निकाल लेते हैं। जो कुछ हमें पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त होता है उसमें हम अपनी आवश्यकताओं को बाँधते जाते हैं। हम परम सन्तुष्ट रहते हैं, अप्राप्त के लिए तरसतेनहीं हैं और किसी अनिष्ट मार्ग की ओर चलने के लिए उत्साहित भी नहीं होते। हम अपने मन को बाँधकर रखना अपने गुरु से सीख चुके हैं। हम मन के दास नहीं, हमारा मन हमारा साथी होता है। सदा अच्छाई की ओर हमें प्रेरित करता है और दुःख-सुख में हमारा भरपूर साथ देते रहता है ऐसे मन के साथ जीवन की तात्कालिक के स्थान पर चरम परिणति पर ध्यान केन्द्रित कर हम आगे बढ़ जाते हैं।

हमारा परिपक्व मन हर परिस्थिति को स्वीकार करता है। वह पश्चिमी मान्यता के अनुसार असन्तोष और विद्रोह को उन्नति का मार्ग नहीं, वरन् अवनति का मार्ग मानता है। वास्तविकता यह है कि भारतीयता का आधार अध्यात्म है। वह शरीर को केवल माध्यम मानता है। शरीर मंजिल नहीं, केवल पुलिया है जो वर्तमान से भविष्य की ओर या अस्थायित्व से स्थायित्व की ओर ले जाता है। किसी ने ठीक कहा है कि पुलिया सन्तरण के लिए ही है, उससे पार हो जा, उस पर अपना घर न बना। भारत की यह शिक्षा हमें निरन्तर प्रगतिशील बनाये रहती है। हम भौतिकता से अधिक आध्यात्मिकता की दृष्टि रखते हैं।

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 1
January-February-2025

इस प्रकार भारतीय शिक्षा का स्वरूप, भारतीय शिक्षा की पद्धतियाँ, भारतीय शिक्षा के उद्देश्य, भारतीय शिक्षा में गुरु का पूजनीय स्थान, भारतीय शिक्षा में गुरु-शिष्य के अनूठे संबंध की चर्चा से यह कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा ज्ञान की असंख्य धाराओं का एक सुंदर संश्लेषण है।भारत विश्वगुरु रहा उसके पीछे ऋषियों तथा तत्ववेत्ताओं की सुचिंतित दृष्टि और कालसिद्ध व्यवस्था कारण रही। उन लोगों ने संस्कारित करने की जो निष्कलुष (Fool proof) विधियाँ आविष्कृत की उन्हीं के कारण लम्बे समय तक पराभव की पीड़ा झेलकर भी हमारा ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति और अस्तित्व कायम रहा। गुरुकुल व्यवस्था और नालन्दा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों को नष्ट कर भी आततायी हमें नष्ट नहीं कर पाये। आइए एक बार फिर काल के कोने में पड़े अपने ज्ञान भण्डार और अपनी समृद्ध विरासत को खोजकर पुनर्प्रतिष्ठापित करें। इसी में स्वयं का, सम्पूर्ण जगत् का और आने वाली पीढ़ियों का कल्याण है। परन्तु इसके लिए हम सभी को मिलकर प्रयत्न करना होगा-

संगच्छध्वं संवदध्वं संनो मनांसि जानताम् ।

संदर्भग्रंथ सूची:

1. काटदरे ई (2018), *भारतीय शिक्षा ग्रंथमाला भाग-1 एवं 2,* पुनरुत्थान प्रकाशन सेवा ट्रस्ट.
2. गोस्वामी, ए. (2000), *ध विज्ञनरी विन्डोः ए क्रोन्टम फीझीसीस्ट्स गाईड टु एनलाइग्टमेन्ट*, व्हेटन, आई-एलः ध थीयोसोफिकल पब्लिसींग हाउस
3. जयसवाल, सीताराम (1987), *भारतीय मनोविज्ञान*, नई दिल्ली: आर्य बुक डिपो
4. तोमर, एल. (2000), *भारतीय शिक्षा के मूल तत्त्व*, गुज. आवृत्ति, कर्णावतीः विद्याभारती
5. नकराणी हिरजीभाई , *'प्राचीन भारत में शिक्षा की गरिमा'*, अहमदाबाद: नवभारत प्रकाशन
6. पाण्डेय, राम शकल(2002), *पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षा दर्शन*, आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर
7. शिक्षा मंत्रालय (2020), *एन.ई.पी.* https://www.education.gov.in/overview
8. सिंह, ए. एवं सिंह. ए. (2021), *मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास*, 9वीं आवृत्ति, दिल्हीः मोतीलाल बनारसीदास इन्टरनेशनल
9. श्रीवास्तव, एस., (2007), *भारतीय शिक्षा मनोविज्ञान*, लखनउः भारतीय शिक्षा शोध संस्थान